Digitized by eGangotri

300
A153

रैनबसेरा

श्रीशंभूदयाल सकसेना

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

बीकानेर
नवयुग-ग्रंथ कुटीर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

स्कैन्ड/Scanned

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्रकाशक
नवयुग-ग्रंथ-कुटीर
फर्रुखाबाद

acc. no: 14499
Rs 1-12-0

[प्रथम बार]
सजिल्द १॥।)

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

मुद्रक
जे० के० शर्मा
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस
इलाहाबाद

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सूची

प्रथम पंक्ति	पृष्ठ
१. कुटिया में एक अकिंचन की	९
२. मैं युगों से बंद घर हूँ	१६
३. गाँव की ओर	१९
४. युगारंभ	२५
५. कच्चे घर	२७
६. प्यार मैंने भी किया था	३०
७. बह गया सरिते ! कितना पानी ?	३१
८. मेरे लिए न अश्रु बहाओ	३२
९. प्यार है बंधन तुम्हारा	३३
१०. जीवन के नन्हें नन्हें पग	३४
११. बादल आसमान में छाये	३५
१२. हार कितने गूँथ डाले	३६
१३. मेरी अकल्पित कल्पना हो	३७
१४. प्रिये, कैसा सुरम्य संसार !	३८
१५. पुतले हैं हाड़-मांस के हम	३९
१६. काम जीवन में जतन का	४०
१७. हाय, दुख भी छोड़ भागा	४१
१८. नभ के ज्योतित तारे	४२
१९. आज कितनी प्यास तन में	४३

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्रथम पंक्ति				पृष्ठ
२०. रोना ही तो शेष यहाँ रे !	..	..	..	४४
२१. आज जीवन का सबेरा	..	..	..	४५
२२. हाय, कितनी आग तन में !		..	..	४६
२३. रो रहा है गान मेरा	..	..	..	४७
२४. उर-अन्तर में आज हमारे	..	..	..	४८
२५. दो घड़ियों का रैनबसेरा	..	..	..	४९
२६. जीवन में एक हिलोर प्रिये !		..	..	५०
२७. वे पल अमर हुए जीवन में	..	..	..	५१
२८. वेदना मानस में है जड़ी	..	..	..	५२
२९. कैसी कुलीनता, कैसा बल !		..	..	५३
३०. रोटी को तरस रही दुनियाँ	..	..	..	५६
३१. माना, वह एक कहानी है	..	..	..	५७
३२. हम हरवाहे, चरवाहे हैं	..	..	..	५८
३३. हम आज कहाँ के कहाँ गये ?		..	..	५९
३४. चाह कंकड़ के हृदय में	..	..	..	६१
३५. जो राजा थे वे रंक हुए	..	..	..	६३
३६. भार दिल में है न थोड़ा	..	..	..	६४
३७. यह मार्ग कहाँ को जाता है ?		..	..	६५
३८. जीने का है अधिकार किसे ?		..	..	६६
३९. रात कैसी है अँधेरी !	..	..	..	६७
४०. मरु में सजल भूमि सोती है		..	..	६८
४१. खोजती किसको सहेली ?	..	..	..	६९

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्रथम पंक्ति	पृष्ठ
४२. भाग्य-शिला पर कर्म-लेख बन	७०
४३. स्वाधीन हमें कहते हो क्यों ?	७२
४४. यह पर्णकुटी शाला मेरी	७३
४५. सागर में जल थोड़ा	७४
४६. सनसन बहता रे आज श्वसन	७५
४७. कुछ अनहोनी-सी घटना है	७६
४८. खंडहर की आँखों में पानी !	७७
४९. गिरि से गिर जलधारा	७९
५०. चित्र प्रिय, ऐसा बनाओ	८१
५१. सब कुछ तो सपना ही सपना	८३
५२. जीवन के वे मधु क्षण आली !	८४
५३. है भिन्न सदा जग का आशय	८५
५४. घन में, वन में, मौन विजन में	८८
५५. क्यों रोते हैं शृगाल वन में ?	८९
५६. मानव तो कच्चा धागा है	९१
५७. मेरी रानी अंगूरलता !	९२
५८. आज अपने अश्रु खारे !	९४
५९. हम, उर-अंतर के छाले	९६
६०. झिलमिलाता सांध्य-तारा	९७
६१. कुछ मधुर और कुछ खारा रे !	९८
६२. दुख से जर्जर अभाव-रीती	९९
६३. हम नदी के दूरवर्ती कूल	१०१

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्रथम पंक्ति				पृष्ठ
६४. प्यार से सूनी जवानी	..	..	..	१०३
६५. भूल जीवन में सका मैं	..	..	..	१०४
६६. प्यार है बंधन तुम्हारा	..	..	..	१०५
६७. औषधि की बूंद	..	..	..	१०६
६८. महायुद्ध ..	..	..	..	११५

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रैनबसेरा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[१]

कुटिया में एक अकिंचन की,

वे हेम-रजत, मणि-रत्न प्रचुर,
जिनसे रहते जगमग गृह-पुर,
कैसे वे दीप-दिव्य होंगे,
कैसी होगी गरिमा धन की ?
कुटिया में एक अकिंचन की।

संचय को कौड़ी पास नहीं,
तो भी मन रंच उदास नहीं,
मंजूषा में अरमानों की,
दुनियाँ हूँ मैं उस निर्धन की।
कुटिया में एक अकिंचन की।

तारे गृह-दीप जगें मेरे,
नभ-नील-वितान मुझे घेरे,
वसुधा मखमली बिछौना है,
इच्छा हो मुझको किस धन की ?
कुटिया में एक अकिंचन की।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हैं पवन अबाध अतिथि मेरा,
रवि-शशि का नित होता फेरा,
पी जाती हूँ मैं खड़े-खड़े,
हँस हँसकर, बूँदों को घन की।
कुटिया मैं एक अकिंचन की।

मैं सतयुग से हूँ खड़ी हुई,
खेतों में रहकर बड़ी हुई,
छाजन मेरा संतोष एक,
इच्छा लवलेश न कंचन की।
कुटिया मैं एक अकिंचन की।

भरती चाँदनी स्वयं झोली,
रवि देता माथे पर रोली,
पूजा करते सुर-इन्द्र-वरुण
अभिलाषा हो फिर किस धन की ?
कुटिया मैं एक अकिंचन की।

कोयल की कूक मुझे भाती,
बुलबुल मेरे सिर पर गाती,
किरणों का मधु पीने वाली
मैं भूखी हूँ किस व्यंजन की।
कुटिया मैं एक अकिंचन की।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नाचते शिखी मेरे आगे,
सोकर नित उषा यहीं जागे,
मोती बटोरतीं खेल-खेल
रश्मियाँ यहीं पर कंचन की।
कुटिया में एक अकिंचन की।

मधु-घट छलकें ये फुल्ल फूल,
भौंरे तितली सब रहें भूल,
कैसा कंटकदल, कहाँ शूल,
बस तान सुनाती गुंजन की।
कुटिया में एक अकिंचन की।

एकाकी, पर गिरि, वन, सरिता—
युग युग की सहचरि चिर-भरिता,
मेरा इनका है गोत्र एक
कहती हूँ मैं इनसे मन की।
कुटिया में एक अकिंचन की।

उर्मिल लहरों का चीर पहन,
गाती लहराती झील बहन,
मैं फूलों से उसकी झोली
भरनेवाली देवी वन की।
कुटिया में एक अकिंचन की।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अपने आँचर का दूध पिला
पाला, उनसे यह सुफल मिला
मैं खाली जर्जर सिसक रही,
उनमें उठती ध्वनि नर्तन की।
कुटिया मैं एक अकिंचन की।

खा कन्दमूल सानन्द-सरल
खेला करते थे शिशु चंचल,
हो स्वस्थ-वयस्क मुझे तज-तज
सब बने शक्ति जाकर धन की।
कुटिया मैं एक अकिंचन की।

वे वधुएँ स्वस्थ सुहाग-भरीं,
क्षय की हो वहाँ शिकार मरीं,
जीवन-मरु में रोतीं-रोतीं
वन्दिनी हुईं कल कंचन की।
कुटिया मैं एक अकिंचन की।

छमछम सन-बिछुए छमकातीं,
फिरती थीं जो सखियाँ गातीं,
वे सब नगरों की ओर गईं,
थी उन्हें लालसा कंकन की,
कुटिया मैं एक अकिंचन की।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बूढ़ों में भी तो प्यास बढ़ी,
उनको भी भायी नहीं मढ़ी,
ले गये उन्हें भी भव्य भवन
मानी न रोक चिर-बंधन की।
कुटिया मैं एक अकिंचन की।

जो गये भले ही वे जाते,
पर सुख तो महलों में पाते,
सुनती हूँ मैं इससे-उससे
लुट गई सम्पदा सब उनकी।
कुटिया मैं एक अकिंचन की।

घुन गईं थूनियाँ, फूस उड़ा,
यह निरानन्द मानस उजड़ा,
इस सूनी बस्ती में फिर भी
क्या होगी पैंछल रुनझुन की!
कुटिया मैं एक अकिंचन की!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२]

मैं युगों से बन्द घर हूँ।

साँस है आती न जाती,
वायु बहने भी न पाती,
एक सूनापन सँजोये
मैं निविड़ तम का शिखर हूँ।
मैं युगों से बन्द घर हूँ।

साँय-साँय विचित्र होती,
भाँय-भाँय हृदय बिलोती,
धूल लगकर गले सोती
मैं सिसकता रुद्ध-स्वर हूँ।
मैं युगों से बन्द घर हूँ।

जो कपाट जड़े, जड़े वे,
फिर नहीं उघड़े, अड़े वे,
रुद्ध-कंठ, न बोल सकता
काल का मैं क्रूर कर हूँ।
मैं युगों से बन्द घर हूँ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बन्द मेरे साथ मेरी,
हैं व्यथाएँ भी घनेरी,
मधुर-कोमल संस्मरणों का
पड़ा उजड़ा पहर हूँ।
मैं युगों से बन्द घर हूँ।

प्यार पाये, हार पाये,
रूप के उपहार पाये,
प्रेम-मंदिर का पुजारी
आज मैं अभिशप्त वर हूँ।
मैं युगों से बन्द घर हूँ।

रणित नूपुर, क्वणित कंकण,
छूम छननन के मधुर क्षण,
दूर—कितनी दूर, भूला
आज उनका मंजु स्वर हूँ।
मैं युगों से बन्द घर हूँ।

उर्वशी औ' मेनकाएँ,
तरुण कल कंचन-लताएँ,
अंक में ले ले उन्हें
चूमे हुए उनके अधर हूँ।
मैं युगों से बन्द घर हूँ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

वे रुचिर मंदार अपने,
हो गये हैं सहज सपने,
आज उनके रजकणों में भी
कहाँ पाता विचर हूँ।
मैं युगों से बन्द घर हूँ।

शेष है दीपक न बाती,
दुख रही है आह ! छाती,
एक भी तो छू न सकता
हाय मैं वे चन्द्र-कर हूँ।
मैं युगों से बन्द घर हूँ।

घाम-हिम-वर्षा सुहाती,
छू न मेरे प्राण पाती,
एक भी है सँध न कोई
कौन मैं, कैसा, किधर हूँ ?
मैं युगों से बन्द घर हूँ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गाँव की ओर

सब चलो गाँव की ओर चलें।
नगरों से नाता तोड़ चलें।

अपने अपने सब छोड़ दिये।
सुख-स्वप्न बीच में तोड़ दिये।
वे शिलाखंड हैं कहाँ आज ?
दंडकवन का वह कहाँ राज ?
वे कहाँ घाटियाँ विजन-प्रान्त ?
वे कहाँ सौम्य एकांत शान्त ?
वे वल्कल औ मृगचर्म कहाँ ?
वे आदि वस्त्र, नर-वर्म कहाँ ?
वे कुश-कंटक, तृणजाल कहाँ ?
वे घास-फूस, वनमाल कहाँ ?
वे कहाँ उटज-आश्रम ललाम ?
वे कहाँ सरित-सर पुण्य धाम ?
वे बाँसों के झुरमुट सुन्दर,
वे कुंज-पुंज, वे मरु-मंदर,
पथ में सब बचपन के साथी
क्यों छूट गये, क्या बाधा थी ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

संस्कृति की ओर बढ़ा मानव,
दूरागत हुआ निसर्ग-विभव।
वह नाता, वह संबंध-स्नेह,
पल भर में सब हो गये खेह।
गृह-गृह, नित द्वार-द्वार, पग-पग
हो गया शिल्प-कौशलमय जग।
कृषि-कला फलीं, विज्ञान उगा।
अपने अपने का ज्ञान जगा।
नर सभ्य बना तज ग्राम्य भाव,
श्रुति, स्मृति, दर्शन का बढ़ा चाव।
कर्तव्य-कर्मगत रीति-नीति
निज विधि-निषेधकृत कटु प्रतीति
जग के ही साथ-साथ भू पर
बन जगड्वाल फैलीं दर-दर।

सभ्यता-भार से दबा मनुज,
वह नहीं हिला सकता निज भुज।
अपने ही धर्म-कर्म बंधन—
बन गये, बँधा उनमें जन-जन।
सब दिग्दिगन्त, सब ओर-छोर,
मच गया कर्म का तुमुल रोर।
संघर्ष-जटिल जीवन-निर्झर
सब ओर बहा घर्घर्, हर्हर्।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

आकुल क्रंदन, व्याकुल पुकार,
अत्याचारों का प्रखर वार।
रह रह निरीह उर उठा कसक,
कोमल कलि-किशलय गये मसक,
पग-पग पर बिखरे शूल यहाँ,
फैले थे मधुमय फूल जहाँ।
रमणीय नहीं रह गई धरा,
कमनीय कान्त मृदु मनोहरा।
कंकाल-शेष ही रहा खड़ा,
जीवन-वृन्दावन सब उजड़ा!

इस त्राहि-त्राहि में त्राण कहाँ?
अविरत श्रम में विश्राम कहाँ?
वह सरल शांति सुख-धाम कहाँ?
मन का वह मधुर विराम कहाँ?
व्याकुल पागल नर रहा खोज,
उड़ गई कान्ति, बह गई ओज।
हड़ताल, क्रान्ति के अस्त्र विफल—
हो गये, हुआ मानव चंचल।
कल नहीं उसे, पल नहीं शान्ति,
आन्दोलित उर में भरी भ्रान्ति।
चकरी-सा वह घिर घूम घूम
है अंधधुंध कर रहा धूम।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

साहित्य-शिल्प, संस्कृति-निकेत
उसको लगते हैं भूत-प्रेत।
वैभव के भव्य-दिव्य मन्दिर
मन को मथते, करते अस्थिर।
आहत, पीड़ित वह रुद्धश्वास
कर उठता भीषण अट्टहास।
प्रत्यय विहीन, सन्देह लीन,
वह चिर मलीन, वह दीन-हीन,
वह क्षत-विक्षत, वह अस्तव्यस्त,
वह शून्य दृष्टि, वह शोक-ग्रस्त,
असहाय, आर्त, संबल-विहीन
वह खोज रहा था पथ नवीन।

सहसा कानों में पड़ी भनक—
'रे! लौट, न आगे बढ़ वंचक!
मत अपने मन को छले और,
जल चुका बहुत मत जले और।
ये काल-पत्र पर लिखे लेख,
कुछ सोच देख, कुछ समझ देख।'
रुक गया चरण, नर हुआ सजग,
देखा पीछे मुड़ विस्तृत मग।
वह जनाकीर्ण, संघर्ष विपुल,
वह स्वार्थ-जटिल, पाहन-संकुल,

14499

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तब से अब तक का लम्बा पथ
वह चलता आया द्रुत अश्लथ।
होगया व्यर्थ पर सब प्रयास,
सभ्यता-पाश बन गया त्रास!

वह झूठा संस्कृति-मोह त्याग,
अब उसी ओर को चला भाग;
जो स्नेहमयी, मधुमयी क्रोड़
निष्ठुर आया था कभी छोड़,
गर्दन मरोड़, संबंध तोड़,
जीवन-सहचर से हृदय मोड़।
रुकते न पाँव, थकती न चाल,
वह उड़ा जा रहा द्रुत अराल।
ठंडी ठंडी शीतल बयार,
करती स्वागत अंचल पसार।
वह पगडंडी की हरी दूब,
उसमें जाते मन-प्राण डूब।
सौन्दर्य लग्न, सहचर्य मग्न,
कुछ जुड़ा चला उर भार-भग्न।
शीतल आत्मा में नव हिलोर
हिलकोर उठी कर तुमुल रोर।
सोई वीणा के तार-तार
झनझना उठे सब एक बार।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सुर में सुर भर, नर छेड़ तान,
गुनगुना चला मृदु मधुर गान—
"पुरवासी सो गिरिवासी हो,
गृहवासी फिर तरुवासी हो,
जनपदवासी बनवासी हो,
मन फिर यह उटज-विलासी हो,

सब चलो गाँव की ओर चलें।
नगरों से नाता तोड़ चलें।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

युगारंभ

सभ्यता जर्जर पुरातन।

आज नित्य नई व्यवस्था
नित्य नव आनंद-क्रंदन।
पुण्य थे वे पाप बनते
शाप होते शीत चन्दन।

जीर्ण जीवन जग उठा है,
मृत्यु का पीकर हलाहल।
आज पतझड़ में वसंती
प्राण की उन्मत्त छलछल।

जोड़ तृण-तृण नीड़ मानव
ने रचा था भव्य-वंदन।
घाम-वर्षा सह युगों की
दृढ़ हुआ था तन-वदन-मन।

तार तार हुआ न उसमें
लेश सामंजस्य कोई।
किन्तु इस संहार में
करवट बदलती सृष्टि कोई।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तुंग वे संस्कृति-सदन खँडहर
बने वरदान से किस ?
क्या न हैं उद्बुद्ध जीवनकण
गरजते नाश के मिस ?

देव-दानव होड़ में इस
बार मानव का परीक्षण।
अब प्रलय का दूत बन फिर
आ रहा है नव्य-नूतन।

जो कदर्थित, दलित, चर्वित,
त्रस्त, आपद्ग्रस्त जग में।
स्पर्श से जगमग युगान्तर
के खड़ा वह भव्य मग में।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कच्चे घर

गोंदी के घर, ऊपर छप्पर,
लौकी की बेलें चढ़ी सुघर।
सीताफल, तुरई झूल रहे,
गूलर, बट, नीम, बबूल रहे।
ये गाय बैल बकरी के घर,
ये घास फूस लकड़ी के घर,
ये तालों की मिट्टी के घर।
ये बेटा औ बिट्टी के घर।
ये अम्मा औ बप्पा के घर।
ये बहू-बेटियों से सुन्दर।
इनमें जीवनरस भरा तरल।
आत्मा इनकी शुचि स्वस्थ सरल।
हैं आसपास सब ओर खेत,
कुछ हरे-हरे, कुछ पीत-सेत।
अरहर, कपास, गेहूँ, गन्ना,
अलसी, सरसों, जौ, मटर, चना,
फूले-फूले कुछ अधमुकुलित,
कुछ गर्वोन्नत, कुछ भाव-नमित।
सनसन आनेवाला समीर
स्पर्शों से उनको अधीर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कर जाता, पुलकित रोम-रोम
हँस उठा अचानक नील व्योम !

है फैल गया कलियुग भू पर
बिजली के तारों को छूकर।
इंजन दौड़े, बिछ गई रेल।
मोटर-विमान की ठेलपेल।
हल-फाल पूछता कौन यहाँ ?
कृषि औ किसान सब मौन यहाँ !
है यहाँ हथौड़ों की ठनठन।
है यहाँ लौह-निर्मित जीवन।
काले-काले यह भीम भूत,
ये यन्त्र नहीं हैं कालदूत।
हैं दहक रहीं भट्ठी धकधक।
धूमिल काजल कढ़ता भकभक।
गलता लोहा, ढलते गाटर,
वे दैत्याकृति लम्बे अजगर।
यह रौरव-ज्वाला से भीषण
उत्तप्त, दृप्त, प्रज्ज्वलित, अरुण
कैसा प्रकाश, इस्पात तरल—
है भरा कड़ाहों में झलझल !
यू-बोट, टैंक, ये विध्वंसक,
ये रॉकेट, ये विमानवाहक,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कुछ यहाँ खड़े, कुछ वहाँ पड़े
कुछ धरती पर, कुछ गगन चढ़े ।
हिलते भूधर, डोलती मही,
सभ्यता पुरातन काँप रही ।

बन गये कृषक सब कारीगर ।
आबाद होगये नये नगर ।
अब कहाँ गये वे कच्चे घर ?
अब कहाँ रहे वे सच्चे घर ?
वे गाँव नहीं, वे ठाँव नहीं ।
नर हार गया सब दाँव यहीं ।
छिप कहाँ गये वे नारी-नर ?
दुर कहाँ गये वे दृश्य अमर ?
तुम रच दो फिर से शिल्पिप्रवर !
अब वही चित्र धरतीतल पर—
'गोंदी के घर, ऊपर छप्पर,
लौकी की बेलें चढ़ी सुघर' ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[६]

प्यार मैंने भी किया था।

बीत संवत्सर गये हैं।
किन्तु वे दिन तो नये हैं।
याद ताजी है हृदय में
जब प्रथम चुंबन लिया था।
प्यार मैंने भी किया था।

शेष सिहरन पुलक तन में।
गुदगुदी मधु-सिक्त मन में।
क्या भुला सकते युगान्तर
जो सरस जीवन जिया था।
प्यार मैंने भी किया था।

लौट आये फिर जवानी।
बहे गंगा वही पानी।
साध कहती दे चलूँ
सर्वस्व जो पहले दिया था।
प्यार मैंने भी किया था।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[७]

बह गया सरिते ! कितना पानी ?

बूँद-बूँद में ढलक गया री,
लहर-लहर में छलक गया री,
धीरे-धीरे रीत गई सब
कैसे भरी जवानी !
बह गया सरिते ! कितना पानी ?

तन में सावन, मन में सावन,
जीवन यह धाराधर-धावन,
किस अलका की कौन विरहिणी
की यह मधुर कहानी ?
बह गया सरिते ! कितना पानी ?

शैशव बीता, यौवन रीता,
बिसर गई प्रिय की मधु गीता,
जब तब हरी भरी हो उठती—
मन की कसक पुरानी ।
बह गया सरिते ! कितना पानी ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[८]

मेरे लिए न अश्रु बहाओ।

यह उपहार बेशकीमत है।
ऐसा कौन हमारा व्रत है?
देवी का वरदान न सरले!
देखो, व्यर्थं लुटाओ।
मेरे लिए न अश्रु बहाओ।

नभ की चादर तनी रहे बस।
सेज भूमि की बनी रहे बस।
इतना क्या थोड़ा है मुझको
भूल सुनयने! जाओ।
मेरे लिए न अश्रु बहाओ।

हरी दूब का मिले बिछौना।
इससे क्या सौभाग्य सलोना?
फिर क्यों जीवन की रानी! तुम
रह-रह हृदय जलाओ?
मेरे लिए न अश्रु बहाओ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[६]

प्यार है वन्धन तुम्हारा।

मत मुझे बाँधो सहेली।
इस विपथ में मैं पहेली।
अन्त मेरा पा सका है
क्या गगन का शुक्र तारा?
प्यार है बन्धन तुम्हारा।

एक उलझन में न भूलो।
मत सुनहरे पैंग झूलो।
कंटकों में कौन रस है,
क्या न तुमने यह विचारा?
प्यार है बन्धन तुम्हारा।

मैं निरंकुश मुक्त मानव।
छोह-छबि मेरे लिए कब?
नियत पथ अपना न बाले!
ध्येय का कोई किनारा।
प्यार है बन्धन तुम्हारा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[१०]

जीवन के नन्हें नन्हें पग।

जल-थल, अवनी में, अम्बर में,
बचपन-यौवन, मधु-पतझर में,
द्रुत सरल-सरल चंचल-चंचल,
चल-चलकर खोज रहे वह मग।
जीवन के नन्हें नन्हें पग।

वह मार्ग कहाँ, विश्राम कहाँ ?
वह अन्तिम धाम ललाम कहाँ ?
हैं बिखर रहे हम जिसके कण
जगमग कर, ज्योतित कर अग-जग।
जीवन के नन्हें नन्हें पग।

फूलों पत्तों द्रुम डारों में,
नभ के ज्वलन्त अंगारों में,
अंकित हैं चरणचिह्न कितने
पर शोध कहाँ पाता जड़ खग ?
जीवन के नन्हें नन्हें पग।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[११]

बादल आसमान में छाये।

मन में दुख की घटा घिरी है,
जीवन की यह एक झिरी है।
टपटप टपटप झहर झहर कर
वर्षा का जल आये।
बादल आसमान में छाये।

ऊपर जल है, भीतर जल है,
पड़ा बीच में प्राण विकल है,
तरल फुहारों को छू-छूकर
रोम-रोम थहराये।
बादल आसमान में छाये।

वर्षा थम जायेगी छन में,
किन्तु उमड़ते जो घन मन में,
उर-अन्तर में सदा रखेंगे
वे अपनी झर लाये।
बादल आसमान में छाये।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[१२]

हार कितने गूँथ डाले !

लोचनों के अश्रु मोती,
थाल भर-भर मैं सँजोती,
प्यार के संसार की निधि
कौन यत्नों से सँभाले ?
हार कितने गूँथ डाले !

क्या मधुर मेला लगा है !
एक नूतन युग जगा है !
संस्मृतियों की सुनहरी
रश्मियों के दीप बाले ।
हार कितने गूँथ डाले !

ले इन्हें किसको चढ़ाऊँ ?
प्राणधन को कहाँ पाऊँ ?
ले गये वे छीन सब कुछ
छोड़ दिल में आग-छाले ।
हार कितने गूँथ डाले !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[१३]

मेरी अकल्पित कल्पना हो।

जिसमें समाई विश्व-छवि हो।
प्राण भरता विश्व-कवि हो।
विश्वगायक के सुरीले
गान की स्वर-योजना हो।
मेरी अकल्पित कल्पना हो।

इन्द्रधनु मणिबन्ध-कंकण,
चन्द्र-कर हों शुभ्र चंदन,
ओसरानी की उषा के
द्वार पर अभ्यर्थना हो।
मेरी अकल्पित कल्पना हो।

उर्मियों-सी गान-गुंजित,
किशलयों-सी राग-रंजित,
क्षितिज-सी निस्सीम, स्वप्नों
सी सुनहरी वासना हो।
मेरी अकल्पित कल्पना हो।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[१४]

प्रिये, कैसा सुरम्य संसार !

चुम्बनों का आदान-प्रदान,
भुजाओं का आलिंगन, गान,
प्रेम के मधुर-मधुर आख्यान,
हृदय का मीठा-मीठा प्यार।
प्रिये, कैसा सुरम्य संसार !

आँसुओं का प्रवाह दिन-रात,
झरा करता ज्यों रजत-प्रपात,
स्नान-मज्जन से अति रमणीय,
नित्य रहता जीवन का द्वार।
प्रिये, कैसा सुरम्य संसार !

लगा है यहाँ विरह का रोग,
किन्तु फिर भी हताश क्या लोग ?
बहा कर प्राणों का उन्माद,
रही मरु में लहरा जलधार।
प्रिये, कैसा सुरम्य संसार !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[१५]

पुतले हैं हाड़-मांस के हम।

रहते हैं फिर भी दूर-दूर,
छू जायँ न हा ! इतना सरूर
चिन्ता-सागर में डूब-डूब कर
भी कितने उथले हैं हम।
पुतले हैं हाड़-मांस के हम।

हम सन्ध्या-पूजन कर पवित्र,
वे जप-तप कर भी दुश्चरित्र,
हम ईश्वर के हैं भक्त निरे,
पर वे हैं प्रभु के पुण्य परम !
पुतले हैं हाड़-मांस के हम।

ईश्वर ईश्वर है इसीलिए,
मामी पतितों की सदा पिये,
अपने भक्तों के छूने में
होता उसका अभिमान न कम।
पुतले हैं हाड़-मांस के हम।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[१६]

काम जीवन में जतन का।

ज्वार में जब बह गये हम,
हाथ खाली रह गये हम,
ले उतारें किस हृदय में,
भार मन का, प्यार मन का ?
काम जीवन में जतन का।

ले किसे साथी बनायें ?
किस हृदय में मन रमायें ?
है न कोई पात्र ऐसा,
मोल समझे अश्रुकन का।
काम जीवन में जतन का।

मार्ग काँटों में बनाना,
शूल लेकर फूल छाना।
दुख-समय सुख संकलन का
यत्न है वर विज्ञजन का।
काम जीवन में जतन का।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[१७]

हाय, दुख भी छोड़ भागा !

आँख में अब है न पानी,
हूक है दिल में न रानी !
मूक मन के भाव सारे,
दूर बैठे तोड़ तागा।
हाय, दुख भी छोड़ भागा !

प्यार ने जब मोह त्यागा,
रह गया जब मैं अभागा,
प्रेम-बन्धन ने उसी क्षण
तोड़ फेंका क्षीण धागा।
हाय, दुख भी छोड़ भागा !

आह ! वह मधुपान आली !
फिर न दोगी एक प्याली ?
जायँगी ये बीत रातें,
दुख मिलेगा भी न माँगा।
हाय, दुख भी छोड़ भागा !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[१८]

नभ के ज्योतित तारे।

सुख-दुख की गणना करते हैं,
जग-ज्वाला में जल मरते हैं—
क्या उन दुखियों की ग्राहों के
ये जलते अंगारे ?
नभ के ज्योतित तारे !

इतनी दूर शून्य में प्रोज्ज्वल,
दहक-दहक उठते हैं जल-जल,
किसके आलिंगन को ग्रातुर
रहते वाहु पसारे ?
नभ के ज्योतित तारे !

कुछ विषाद-सा इनके मन में
घनीभूत हो उठा गगन में ?
उसकी छाया से ये झिलमिल
झिलमिल कर-विस्तारे।
नभ के ज्योतित तारे !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[१९]

आज कितनी प्यास तन में !

ओठ सूखे, कंठ सूखा,
शुष्क जीवन, प्यार रूखा,
बीत जब पावस चला है,
कौन-सी अब आस घन में ?
आज कितनी प्यास तन में !

झर न लगती है नयन में,
स्वेद उड़ जाता पवन में,
तूल-सा मैं तुल रहा हूँ
प्रेम के इस कुंज-वन में।
आज कितनी प्यास तन में !

बह रहा वातास सन-सन
कह रहा—तू सूख कन-कन।
हैं कहाँ वे घन-सरित दें
सींच हिम-जल तप्त मन में।
आज कितनी प्यास तन में !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२०]

रोना ही तो शेष यहाँ रे !
मरन-विछोह विशेष यहाँ रे !

जीवन के प्रासाद मनोहर
सिसक रहे हैं होकर जर्जर,
मधुर-मिलन की दो घड़ियों में,
आँसू का संदेश यहाँ रे !
रोना ही तो शेष यहाँ रे !

सन्ध्या का कर्णफूल पहने
आई थी जो मन की कहने
मंदिर की पावन प्रतिमा-सी
उस रंगिणि का वर वेश कहाँ रे !
रोना ही तो शेष यहाँ रे !

मधु-शेष हुईं मादक साँसें,
मन की भी आज शिथिल रासें,
परिमल समीर के साथ गया
उसका न रहा लवलेश यहाँ रे !
रोना ही तो शेष यहाँ रे !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२१]

आज जीवन का सवेरा।

आसमान प्रभानुरंजित,
भूमि का स्वर गान-गुंजित,
तरु-लता-तृण-घास-पल्लव
में पुलक का है बसेरा।
आज जीवन का सवेरा।

झर रहा है हेम दिनकर,
क्षीर ढलता शैल-निर्झर,
आज कण-कण में जगत के
है किसी ने प्राण प्रेरा।
आज जीवन का सवेरा।

हो रहा संगीत घन में,
बाँसुरी बजती विजन में,
मूक शंबुक-शुक्तियों में
भाव किसका, गीत मेरा?
आज जीवन का सवेरा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२२]

हाय, कितनी आग तन में !

थम गये आँसू नयन में,
सूखकर उच्छ्वास मन में
उड़ गई जाने कहाँ होकर
हृदय की भाप घन में ?
हाय, कितनी आग तन में !

रोम-रोम अँगार जलता,
मोम् होकर जी पिघलता,
आज होली हो रही है
वेदना की तन-बदन में।
हाय कितनी आग तन में !

जल गया जो कुछ बचा था।
गल गया जो कुछ रचा था।
शेष केवल रह गई है
प्रलय की खर ज्वाल मन में।
हाय, कितनी आग तन में !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२३]

रो रहा है गान मेरा।

ताल-स्वर में सिसकियाँ हैं।
बोल-गति में हिलकियाँ हैं।
विकल क्रंदन से विकम्पित
हो रहा है प्राण मेरा।
रो रहा है गान मेरा।

साँस में रोता पवन है,
बाँस में रोता विजन है,
आँसुओं में आज मुँह को
धो रहा अभिमान मेरा।
रो रहा है गान मेरा।

सार यौवन में कहाँ है?
सार जीवन में कहाँ है?
सार तो केवल रुदन में
पा रहा मन त्राण मेरा।
रो रहा है गान मेरा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२४]

उर-अन्तर में आज हमारे

एक हूक उठती है रह-रह
उस दिन की सुधि प्राणों में बह
अंकित करती है अतीत-
जीवन-सरिता के कूल-कगारे।
उर-अन्तर में आज हमारे।

सुलग सुलग उठती है सोई
आग जलाकर दीपक कोई
शून्य कक्ष के अन्तराल में
आलोकित करता दर-द्वारे।
उर-अन्तर में आज हमारे।

इन आहों में दाह प्रमुख है,
किन्तु दाह में भी तो सुख है,
सुख की मृदु रेशम-डोरी में
गुँथे हुए हैं आँसू खारे।
उर-अन्तर में आज हमारे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२५]

दो घड़ियों का रैनबसेरा,

मेरी-तेरी राह अलग है,
यह मेरा, वह तेरा मग है,
मार्ग-मिलन की मधु घड़ियों में
कर हँस-बोल सवेरा।
दो घड़ियों का रैनबसेरा।

जुगनू से दो पल आलोकित,
छवि से मानस-मूल सुशोभित,
क्षणिक प्रभा से पूर्ण हृदय में
व्यापक एक अँधेरा।
दो घड़ियों का रैनबसेरा।

हँस ले कुसुम वृन्त पर अपने,
देख-भाल ले वे सुख-सपने,
यह शबनम बटोर ले जाने
को आतुर है सहज सवेरा।
दो घड़ियों का रैनबसेरा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२६]

जीवन में एक हिलोर प्रिये !

हैं उमड़ रही अन्तरतर से।
उठती है वह किस गह्वर से ?
सागर-मंथन से ज्वार उमड़
भरती है भीषण रोर प्रिये !
जीवन में एक हिलोर प्रिये !

उसमें बिजली की लरज-तरज,
उसमें बादल की भीम गरज,
उसमें मानस का अमृत-गरल
मिल, रहा खूब हलकोर प्रिये !
जीवन में एक हिलोर प्रिये !

ये कूल-करारे टूट-टूट
गिरते, लख साहस रहा छूट
कैसा प्रचंड रेला है री !
देगा भूमंडल बोर प्रिये !
जीवन में एक हिलोर प्रिये !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२७]

वे पल अमर हुए जीवन में।

मिले भरत से राम हृदय लग,
सजल आँसुओं से गीले पग,
लेकर अपने चित्रकूट में
सुखी नित्य मानव था मन में।
वे पल अमर हुए जीवन में।

शोणित पान सहोदर का कर,
खंड-खंड कर पितृ-हृदय घर,
सिंहासन-लिप्सा में अन्धा
सभ्य मनुज कैसे इस तन में ?
वे पल अमर हुए जीवन में।

दैन्य दुखी रोता है मग में,
सैन्य-सुखी सोता पड़ जग में,
मानव पर दानव को विजयी
देख सुखी कालानल मन में।
वे पल अमर हुए जीवन में।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२८]

वेदना मानस में है जड़ी।

मुझे आती अतीत की याद,
याद में कितने दुःसंवाद!
मिटाने को मन का अवसाद,
जानती हूँ मैं जो जो गीत
कभी गा लेती हूँ दो कड़ी।
वेदना मानस में है जड़ी।

कहाँ अधरों का चुंबन प्यार,
कहाँ आलिंगन का उर-भार
सुनहला कहाँ गया संसार?
आज जलती जीवन में आग,
आग में मीन तुल्य मैं पड़ी,
वेदना मानस में है जड़ी।

आज ज्वाला में भी आनन्द,
रुदन हो कढ़ता नव नव छन्द,
आँसुओं का पी पी मकरन्द,
कर रही हूँ जीवन-जग धन्य
प्रेम-सरिता के तट पर खड़ी।
वेदना मानस में है जड़ी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[२६]

कैसी कुलीनता, कैसा बल !

सब एक राख से बने हुए,
सब एक ज्योति के जने हुए,
इतना वैषम्य, असम अंतर,
कोरी विडंबना, कोरा छल !
कैसी कुलीनता, कैसा बल !

तुमको धरती पर ठौर नहीं,
हमको खाने को कौर नहीं,
तुम भी जीते, हम भी जीते,
भर भर जीवन में अमृत-गरल,
कैसी कुलीनता, कैसा बल !

है रंग-रूप का भेद कहाँ ?
तो भी भव-भावाभेद कहाँ ?
है छेद रहा यह शूल हूल
लख दीनहीन कुछ शक्ति सबल ।
कैसी कुलीनता, कैसा बल !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कुछ भरे और कुछ रीते हैं,
कुछ मधु कुछ आँसू पीते हैं,
क्या कालकूट के साथ-साथ
मिलकर बहता है गंगाजल !
कैसी कुलीनता, कैसा बल !

झोपड़ियाँ जिनमें फूस नहीं,
अपने वैभव पर रूस रहीं,
गाते-गाते रँगरलियों में
भूले अपनापन रंगमहल।
कैसी कुलीनता, कैसा बल !

दुख को सुख का सहयोग नहीं,
रोगी को यह सब भोग नहीं,
दो भागों में बँट गया जगत,
कुछ पीन-प्रबल, कुछ हत-निर्बल।
कैसी कुलीनता, कैसा बल !

फैला जो यह भूमंडल पर,
क्या इस सबका कर्ता ईश्वर ?
क्या मानव का कर्तृत्वजाल
ही नहीं रहा है उसे कुचल ?
कैसी कुलीनता, कैसा बल !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कंधे से कंधा जोड़-जोड़,
निज-निज स्वार्थों को छोड़-छोड़,
क्या गले नहीं मिल सकते हैं
निबलों-सबलों के दोनों दल ?
कैसी कुलीनता, कैसा बल !

रख हाड़-माँस को पास-पास,
तुल सकते जो दोनों सहास,
बहती जीवन में एक साँस
ढुल जाता सब वैषम्य-गरल,
कैसी कुलीनता, कैसा बल !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रोटी को तरस रही दुनियाँ,

हम नहीं चाहते दूध-दही,
माखन मिश्री अब कहाँ रही ?
भूखों-नंगों से दीन-दुखी
आँसू नित बरस रही दुनियाँ।
रोटी को तरस रही दुनियाँ।

कंकड़-पत्थर की शैया है,
जीवन की डगमग नैया है,
आशा का झीना पाल लिये
झंझा से झुलस रही दुनियाँ,
रोटी को तरस रही दुनियाँ।

बूँदों में रक्त रहा तन में,
अवशेष कहाँ धीरज मन में ?
कंकाल-शेष-सा वेश किये
करुणा से सरस रही दुनियाँ !
रोटी को तरस रही दुनियाँ।

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[३१]

माना, वह एक कहानी है।

थी सत्य एक दिन जीवन में,
बँधकर उसके भुज-बंधन में,
हम भूल गये थे हाय ! कि
यह सरिता का बहता पानी है।
माना, वह एक कहानी है।

कब स्वर्ग-मोक्ष समझे हमने ?
पाये कब अन्य विषय जमने ?
उन लाड़-प्यार की घड़ियों की
आँसू बस एक निशानी है।
माना, वह एक कहानी है !

पर स्वप्नों का क्या मोल नहीं ?
क्या साँसों की कुछ तोल नहीं ?
छलना ही वह सही किन्तु
हमने यथार्थ कर जानी है।
माना, वह एक कहानी है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[३२]

हम हरवाहे, चरवाहे हैं।

खेतों में है परिचय अपना,
ढोरों में है संचय अपना,
सपना सबको लगता है जो
हम उसी सिन्धु को थाहे हैं।
हम हरवाहे, चरवाहे हैं।

गोड़ते-जोतते नित्य मही,
संपत्ति हमारी दूध-दही,
कितने कष्टों के बाद आज
हमने जौ-गेहूँ गाहे हैं!
हम हरवाहे, चरवाहे हैं।

श्रम में अपने दीपावलियाँ,
हाथों से झरती फुलझड़ियाँ,
हम वसुधा के वरदान सदा;
युग-युग-द्वारा हम चाहे हैं।
हम हरवाहे, चरवाहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[३३]

हम आज कहाँ के कहाँ गये !

हल-बैल लिये हम आये थे,
धरती ने पलक बिछाये थे,
जो पुरस्कार में मिले हाय,
नभ के वे मोती कहाँ गये ?
हम आज कहाँ के कहाँ गये !

सरिता का जल पीनेवाले,
वनखंड-बीच जीनेवाले,
छल-छंदों से क्या काम हमें
सुख-चैन जहाँ थे नित्य नये।
हम आज कहाँ के कहाँ गये !

फल-फूल देख पुलकित होते,
सहचर थे पर्वत के सोते।
हम पर्णकुटी के अधिवासी,
हम देवों के उल्लास नये।
हम आज कहाँ के कहाँ गये !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हम नगरों-महलों के वन्दी,
कंकालशेष हम दुख-द्वन्दी,
अभिशप्त-तप्त हम नरक-कीट
इस पाप-पंक में नहा गये।
हम आज कहाँ के कहाँ गये !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[३४]

चाह कंकड़ के हृदय में !

घास, तृण, तरु, पुष्प, पल्लव,
कुसुम-कोमल, कंटकित दल,
चाह से ही जी रहे हैं,
इन दिनों में—इस समय में।
चाह कंकड़ के हृदय में !

पत्थरों में चाह सोती;
खँडहरों में आह रोती !
उर उरों से लग रहे हैं
चाह की उन्मत्त वय में।
चाह कंकड़ के हृदय में।

यह जगत जड़ और मृत है,
चाह जीवन है—अमृत है।
सूर्य, शशि, उडु, अवनि, अंबर
हैं जड़े सब कर-वलय में।
चाह कंकड़ के हृदय में।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

है न जीवन्मुक्त ही यह,
राग-रोष विमुक्त ही यह,
भाग्य-पथ पर है पड़ा
दुख-दाह लेकर यह प्रलय में !
चाह कंकड़ के हृदय में !

यह पद-ध्वनि का पुजारी,
प्यार का सर्वाधिकारी,
जड़भरत होकर समाधि-
निमग्न बैठा कौन लय में ?
चाह कंकड़ के हृदय में !

क्यों इसे ठुकरा रहे हो ?
यह दुखी, तुम गा रहे हो ?
क्रूरता इतनी तुम्हारे आह
निर्मम ! चरण-द्वय में ?
चाह कंकड़ के हृदय में !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[३५]

जो राजा थे वे रंक हुए।

कब्रें वीरों को लील गईं।
खँडहर में मिल तह्वील गईं।
जो सरसिज थे सर में फूले
वे गिर पैरों में पंक हुए।
जो राजा थे वे रंक हुए।

अरमान हृदय में शेष रहे।
जो थे वे क्या अब वेश रहे।
अपने शशि में तो हमीं हाय!
निष्कारण अधम कलंक हुए।
जो राजा थे वे रंक हुए।

मधु पी-पीकर आँसू पीना,
भिखमंगों का जीवन जीना,
हा, स्वर्ण-रश्मि से खचित-रचित
वे कहाँ भाल के अंक हुए?
जो राजा थे वे रंक हुए।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[३६]

भार दिल में है न थोड़ा,

आँख में आँसू खड़े हैं,
पैर में छाले पड़े हैं,
मूढ़ मन ने, प्यार से,
क्यों जानकर संबंध जोड़ा।
भार दिल में है न थोड़ा।

मधुर सुधि का दंश लेकर,
जी रहा हूँ अश्रु सेकर,
टीस उठता है हृदय में
बन रहा जो एक फोड़ा।
भार दिल में है न थोड़ा।

शेष संबल हो गया है,
धैर्य भी ध्रुव खो गया है,
देह का यह धर्म भी तो
चाहता अब साथ छोड़ा।
भार दिल में है न थोड़ा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[३७]

यह मार्ग कहाँ को जाता है ?

हम चलते-चलते हार गये,
तो भी क्या सागर पार गये ?
दोनों कूलों के मध्य मनुज
जीवन-तरणी लहराता है।
यह मार्ग कहाँ को जाता है ?

इसका है ओर-न-छोर कहीं,
इसमें लहरें हलकोर रहीं,
अब-तब डूबे का भाव मात्र
ही मन में आता-जाता है।
यह मार्ग कहाँ को जाता है ?

साथी-संगी सब क्षण भर के,
यौवन-मधु बूँद-बूँद ढरके,
बीता प्रभात—मध्याह्न गया,
संध्या से किसका नाता है ?
यह मार्ग कहाँ को जाता है ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[३८]

जीने का है अधिकार किसे ?

नंगे भी हैं, भूखे भी हैं,
दुख सह सह कर सूखे भी हैं,
ऐसी भी है चक्की कोई
जिसमें हम पहली बार पिसे ?
जीने का है अधिकार किसे ?

भगवान हमें जो भूल गये,
रह चुनने को बस शूल गये,
मिट सकते हैं क्या वज्र-लेख
जो मानव सौ-सौ बार घिसे ?
जीने का है अधिकार किसे ?

संसृति की इच्छा से प्रेरित,
रहता है मानव का नित चित,
अन्यथा कभी का पा जाते
कहते जीवन का सार जिसे ।
जीने का है अधिकार किसे ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[३६]

रात कैसी है अँधेरी !

बुझ गये दीपक भवन के,
हैं कहाँ तारे गगन के ?
एक काजल की घटा ने
आज सारी सृष्टि घेरी !
रात कैसी है अँधेरी !

किन्तु अन्तर में हमारे,
जग रहे अगणित सितारे,
कर-किरण अभिनव पसारे
दे रहा है चन्द्र फेरी।
रात कैसी है अँधेरी !

आज अन्तर से जगायें
वाह्य जग को, फूल छायें
लग रही हैं जहाँ तीखे
कंटकों की एक ढेरी !
रात कैसी है अँधेरी !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मरु में सजल भूमि सोती है।

उर से लग कर, गले लिपट कर,
प्राणों के अंचल से सट कर,
ताप-तप्त अभिशप्त हृदय-तट
छलछल मधु-सरिता धोती है।
मरु में सजल भूमि सोती है।

मानस की दावानल से गल,
मानिक-मदिरा-सी वह उच्छ्वल,
जीवन-पथ की विभ्रान्ति-श्रान्ति
सब उसकी सुधा-बूँद खोती है।
मरु में सजल भूमि सोती है।

संसृति की निस्तब्ध निशा में,
जीवन की चिर-मौन दिशा में,
सजल मोतियों की तृण-तरु पर
मन्द-मधुर वर्षा होती है।
मरु में सजल भूमि सोती है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[४१]

खोजती किसको सहेली ?

दूर घर है प्राणधन का,
मार्ग-टेढ़ा बन-विजन का,
साँझ की बेला, दिशाएँ
मौन, तुम फिरतीं अकेली !
खोजती किसको सहेली ?

प्राण क्यों बेचैन आली,
क्या पड़ी इतनी उताली ?
ढूँढने जाती मधुप को
क्या कभी चलकर चमेली ?
खोजती किसको सहेली ?

लाल होंगे गाल रानी
जब उषा के, दुख-कहानी
आ सुनेंगे प्राणवल्लभ,
फिर बढ़ाकर प्रेम-बेली ।
खोजती किसको सहेली ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[४२]

भाग्य-शिला पर कर्म-लेख बन,
अंकित हैं जीवन के श्रमकन,
व्यक्त हो उठा है मानव-मन,
खिंची युगों के वक्षस्थल पर
संस्कृति की बिधुलेखा !

नव नव रंगों, नव रूपों में,
नभ-चुंबी उच्चस्तूपों में,
ध्वस्त खँडहरों में, कूपों में
प्रचुर सभ्यता की इंटों में
कढ़ी विश्व की रेखा।

ये लघु-गुरु पद-चिह्न निरन्तर,
बनते-मिटते हैं जीवन भर,
शिल्प-कल्प हो उठते भास्वर,
इन चित्रों में झाँक रही
किस अमर दृश्य की रेखा ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

इसमें जीवित हैं मन्वन्तर,
साँसें सतयुग, त्रेता, द्वापर,
इसके निर्माता मानव-कर,
सुषमा की इस रम्य राशि का
स्वर्ण स्वप्न-भर देखा।

आर्य, हूण, मंगोल, यवन दल,
सबकी अंजलि का शीतल जल,
द्रविड़, सुमेरों का कल कौशल,
सर्ग-देवता के चरणों में
चढ़ा यहीं पर देखा!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[४३]

स्वाधीन हमें कहते हो क्यों ?

चिर-बंधन में हम बँधे हुए,
अपने नियमों में रुँधे हुए,
हम जन्मावधि हैं दास हमें
संबंध रहित कहते हो क्यों ?
स्वाधीन हमें कहते हो क्यों ?

ये जन्म-मृत्यु के संस्कार,
सब बंधन ही तो रे उदार !
तुम एक मुक्ति का नव बंधन
फिर अपने सिर सहते हो क्यों ?
स्वाधीन हमें कहते हो क्यों ?

यह मानव ही तो है बंधन,
यह जीवन ही तो चिरक्रन्दन,
फिर एक नई ज्वाला-जागृत कर
तुम यह उर दहते हो क्यों ?
स्वाधीन हमें कहते हो क्यों ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[४४]

यह पर्णकुटी शाला मेरी।

जीवन-कंपन से यह सजीव,
प्राणों पर इसकी उठी नींव,
इसमें कर रुनुक-झुनुक फिरती
मेरी प्रेयसि, बाला मेरी।
यह पर्णकुटी शाला मेरी।

इसमें रम्भा का रूप भरा,
इसकी प्रिय पुण्य पवित्र धरा,
इसके आँगन में बही ढलक कर
यौवन की हाला मेरी,
यह पर्णकुटी शाला मेरी।

इसके कण-कण में प्यार-पुलक,
इसके तृण-तृण में अश्रु छलक,
इसकी साँसों से गुँथी हुई
है सपनों की माला मेरी।
यह पर्णकुटी शाला मेरी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[४५]

सागर में जल थोड़ा,

गिनी हुई जीवन में साँसें,
मन-ताजी की चंचल रासें,
छूट जायगा कहाँ, संग
अब तक न हाय जो छोड़ा,
सागर में जल थोड़ा।

मीन ! मधुर संबंध तुम्हारा,
तुमको यह मीठा जल खारा,
बागुर-बंध सहा सन्मुख
तुमने न कहीं मुख मोड़ा,
सागर में जल थोड़ा।

फूलों के क्षण बिसर चले री !
भीतर-भीतर हृदय जले री !
बूँद-बूँद कर छीज चला
जो चाह-चाह कर जोड़ा।
सागर में जल थोड़ा !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[४६]

सन-सन बहता रे आज श्वसन,

वह पटक रहा है अगणित फन,
किस क्रूर दुष्ट पर रुष्ट हुआ
उमड़ा पड़ता है उसका मन !
सन-सन बहता रे आज श्वसन !

वह सरीसृपों-सा रेंग चला,
लेकर प्राणों में कौन बला ?
फूत्कार रहा फम् फम्, फेनिल
लावा-सा ढरता ज्वलितानन ।
सन-सन बहता रे आज श्वसन !

बेचैनी में वह डूब रहा,
यह हरी-हरी-सी दूब अहा,
क्या शान्त कभी कर पायेगी
अन्तर में जो हो रही जलन ?
सन-सन बहता रे आज श्वसन !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[४७]

कुछ अनहोनी-सी घटना है।

पत्थर से सरिता फूट पड़ी,
नीरद में विज्जु-छटा उमड़ी,
उर्मिल सागर में वह्नि-शिखा,
चातक में व्याकुल रटना है।
कुछ अनहोनी-सी घटना है।

भूचालों पर धरती बसती,
अंबर में चन्द्रकला हँसती,
हिम जला रहा है तृण-तरु को
जलधारा से पवि कटना है।
कुछ अनहोनी-सी घटना है।

करुणा का गीला एक चरण,
काफी है भरने को उर-व्रण,
इस दुनियाँ में रवि-किरणों से
जीवन का पादप अँटना है।
कुछ अनहोनी-सी घटना है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[४८]

खँडहर की आँखों में पानी।

सम्राटों के पगतल चूमे,
अनगिन तुरी-मतंगज झूमे,
लचक लचक कर चली यहाँ
कितनी भूमंडल की रानी ?
खँडहर की आँखों में पानी !

वे प्रसून-कोमल-दल बाला,
उन मुखड़ों का रूप-उजाला,
चल पद-मुखर-नूपुरों की
अब कहाँ हाय वह वाणी !
खँडहर की आँखों में पानी।

प्रणयरूप यौवन की हाला,
पी-पीकर मधु जग मतवाला,
बसा हुआ था यहीं शेष
क्या उसकी आज निशानी ?
खँडहर की आँखों में पानी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सिंहपौर वे सौध अनोखे,
अभ्रंकष वे अट्ट-झरोखे,
झाँक रहे थे दिगदिगन्त में
सबकी शेष कहानी।
खँडहर की आँखों में पानी !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[४९]

गिरि से गिर जलधारा।

उर की व्यथा, हृदय की ज्वाला,
जीवन का कटु कष्ट-कसाला,
लेकर बहती तरल तीव्र-गति
फोड़ शैल की कारा।
गिरि से गिर जलधारा!

प्रलय बंद पाषाण-खंड में,
अन्तर्ज्वाला वेग चंड में,
उमड़-घुमड़ घन-मन्द्र भीम रव
खनती कठिन कगारा।
गिरि से गिर जलधारा!

एक आग अंचल से छाये,
सजला यह तरला बन धाये,
हर-हर घहर-घहर घहराये
घर हलचल से सारा।
गिरि से गिर जलधारा!

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ओ स्वतंत्रता के दीवानो !
इस हरहर का स्वर पहचानो,
कँपा शिलोच्चय को बह निकलो
झुके धरणिधर भारा,
गिरि से गिर जलधारा !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[५०]

चित्र प्रिय, ऐसा बनाओ।

धूप भी हो, छाँह भी हो,
प्यार की गलबाँह भी हो,
प्रेम की नदियाँ बहाकर
शोक के बादल घिराओ।
चित्र प्रिय, ऐसा बनाओ।

फूस की कुटिया, विजन थल,
चिरसमाधि निमग्न अविचल
एक मानवमूर्ति गढ़कर
आँसुओं में फिर गलाओ।
चित्र प्रिय, ऐसा बनाओ।

वंचिता की रिक्त झोली,
नववधू को रक्त-रोली,
दृश्य जीवन का समूचा
एक ही पट पर बिछाओ।
चित्र प्रिय, ऐसा बनाओ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अश्रु भी हों, हास भी हो,
चण्ड ताण्डव, लास भी हो,
एक तूली में प्रियंवद !
ले सभी तुम रंग आओ।
चित्र प्रिय, ऐसा बनाओ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[५१]

सब कुछ तो सपना ही सपना !

मिटने को यह यौवन अपना,
मिटने को री जीवन अपना,
मिटने को धाम-धरा सारे
मिटने को दिनकर का तपना।
सब कुछ तो सपना ही सपना।

तो भी तुम अपना ही अपना,
माने बैठीं नवनीत-मना,
जो देख रही हो अंबुधि को
देखो लहरों का भी कँपना।
सब कुछ तो सपना ही सपना।

तरु डोल रहे हैं जिस भय से,
गाते पंछी हैं जिस लय से,
सबकी उस नश्वरता का री
है मंत्र विश्व भर को जपना।
सब कुछ तो सपना ही सपना !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[५२]

जीवन के वे मधु-क्षण आली !

अंबर के उर में तारा बन,
निरखा करते हैं साश्रु नयन,
अरमानों की समाधि अपनी
चिरमौन जहाँ की रखवाली !
जीवन के वे मधु-क्षण आली !

वे ओस-बूँद हिमगात तरल,
झलमल झलमल, छल-छल, छल-छल,
तृण तरु हरियाली से हिलमिल
रँगते संस्मृतियों की जाली,
जीवन के वे मधु-क्षण आली !

रत्नों की लूट यहाँ होती,
जग चुगता, मैं फिर-फिर बोती,
मेरी खेती में फूलों की
आई बहार, छाई लाली ।
जीवन के वे मधु-क्षण आली !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[५३]

है भिन्न सदा जग का आशय।

यह कहता हो जब प्यार करो,
तो अच्छा हो संहार करो,
अन्यथा यही कह 'पाप-पाप'
उच्चस्वर से देगा परिचय।
है भिन्न सदा जग का आशय।

इसके जीवन की जो गीता,
रस झूम-झूम जिसका पीता,
उसको ही यह बदनाम करे,
उसको पुकारता यही अनय।
है भिन्न सदा जग का आशय।

यह सोमपान कर मंत्र पढ़े,
यह सामगान कर उच्च चढ़े,
यह कलाकुशल बन नाट्य करे
यह रहता है नित उच्चाशय।
है भिन्न सदा जग का आशय।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पर नृत्य, गीत, रसपान देख,
कुंचित होती भ्रू-वक्र-रेख,
जल उठता इसका रोम-रोम
कढ़ती इससे ज्वाला दुर्जय।
है भिन्न सदा जग का आशय।

कृतकर्मों को कह पुण्य-धर्म,
रहता है रक्षित पहन वर्म,
दुष्कर्म, पाप कहकर सबका
भेदन करता है मर्म-हृदय।
है भिन्न सदा जग का आशय।

गौरव, कुलीनता, धन-जन-बल,
इनसे है यह जग पुष्ट-प्रबल,
इसकी आँखों का कंटक बन
जीता है रंक निरीह-निलय।
है भिन्न सदा जग का आशय।

तुम बनो दहकता अंगारा,
तुम बहो प्रवाह प्रबल-धारा,
तुम झंझाकृत तूफान बनो,
हो महागर्त अवरुद्ध हृदय।
है भिन्न सदा जग का आशय।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

काँपे धरती, डोलें भूधर,
बुझ जायँ प्रचंड किरण भास्कर,
इस रुद्रनृत्य में दुनियाँ के हो
पाप-पुण्य का फिर निश्चय,
है भिन्न सदा जग का आशय।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[५४]

घन में, वन में, मौन विजन में,
जीवन में, कन-कन में, मन में,
कौन भरा करता है मधुघट,
रीते करता है फिर छन में ?

जल में, थल में औ समतल में,
पल-पल के आकुल हृत्तल में,
कौन ज्वार-सा उठ उठ कर
फिर बनता है भाठा प्रतिपल में ?

मधु-सौरभ में, पुष्प-हास में,
वासन्ती यौवन-विलास में,
प्राणों का संगीत फूँक कर
कौन चिता रचता है मग में ?

रसमय, विषमय, जन्म मृत्युमय,
सुख यौवनमय, जीर्णजरामय,
कौन किया करता है अंकित
नव नव दृश्य नये मधुवन में ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[५५]

क्यों रोते हैं शृगाल वन में ?

है जहाँ शिवा का साथ सदा,
प्रिय प्रकृति मोहनी फल-प्रदा।
क्या महलों में जा बसने की
इच्छा होती उनके मन में ?
क्यों रोते हैं शृगाल वन में ?

वे नहीं जानते मानव को,
उस हिंस्र क्रूर-कर दानव को।
जिसके अपने ही स्वजन ग्रास
होते हैं क्षुद्र प्रलोभन में।
क्यों रोते हैं शृगाल वन में ?

सुन पड़ता कुछ संगीत उन्हें।
होता कुछ लोभ प्रतीत उन्हें।
वे क्या जानें ईंटें-पत्थर तक
सिसक रहे मन ही मन में।
क्यों रोते हैं शृगाल वन में ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मनु की इस संतति से संतत,
कंपित रहती महलों की छत,
जो शील-धर्म को पाप-पीठ पर
बलि कर देता है छन में।
क्यों रोते हैं शृगाल वन में ?

मानव यह ईर्ष्या-योग्य नहीं।
ये धवल-धाम उपभोग्य नहीं।
ये पाप-ताप में डूब रहे
अभिशाप रचाये कन-कन में।
क्यों रोते हैं शृगाल वन में ?

क्या सुन्दर वन की हरित धरा !
क्या ही सर निर्मल नीर-भरा !
कैसा उन्मुक्त समीर यहाँ
बहता भौंरों के भनभन में।
क्यों रोते हैं शृगाल वन में ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[५६]

मानव तो कच्चा धागा है।

सह सके काल का कर-स्पर्श,
पा सका कहाँ यह समुत्कर्ष,
पल-पल के बंधन में वन्दी
जीवन भी एक अभागा है।
मानव तो कच्चा धागा है।

विश्रृंखल यह, क्षणभंगुर यह,
बढ़ सका अभी दो अंगुर यह,
है शेष पड़ा विस्तार अगम,
निस्तार कहाँ जो माँगा है ?
मानव तो कच्चा धागा है।

छूने को शाश्वत प्राणों को,
वह सूँघ रहा सब घ्राणों को,
वह कस्तूरी-कण कहाँ भयाकुल
फिरता जिसको भागा है ?
मानव तो कच्चा धागा है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[५७]

मेरी रानी अंगूरलता !

वह मदन-भस्म से बनी हुई,
वह छबि-सुषमा की छुईमुई,
पड़ आसमान की चादर के
नीचे सोती ले निश्चलता।
मेरी रानी अंगूरलता !

परियों ने जिसके पग परसे,
छूकर जिसको अशोक सरसे,
उसकी समाधि पर आँखों से
आँसू तक मुश्किल से झरता।
मेरी रानी अंगूरलता !

जिसकी विभूति का अन्त न था,
छवि का उपमान वसन्त न था,
वह फूल-सेज को छोड़ आज
कंकड़-पत्थर पर है शयिता।
मेरी रानी अंगूरलता !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हैं आज रेशमी वस्त्र कहाँ ?
चितवन के तीखे अस्त्र कहाँ ?
युवकों के हृदय छेद डाले
वह कहाँ प्रिये ! तव चंचलता ?
मेरी रानी अंगूरलता !

तुम चिर दिन तक विश्राम करो,
तुम निर्जन में आराम करो,
इस जीवन का परिणाम यही,
यौवन—फिर उसकी नश्वरता !
मेरी रानी अंगूरलता !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[५८]

आज अपने अश्रु खारे !

मधुर मृदु मधु-पान कर भी,
रूप-रस में स्नान कर भी,
प्यार की घड़ियाँ जिया मैं
चुम्बनों के ही सहारे !
आज अपने अश्रु खारे !

सब कहें यह क्या बला है ?
नोन शर्बत में गला है !
कौन घन से मिल उदधि-जल
छोड़ता है ये फुहारे !
आज अपने अश्रु खारे !

भाग्य एक विडंबना है,
प्रेम कोरी कल्पना है,
आज है सो कल नहीं है
पेड़ सरिता के किनारे।
आज अपने अश्रु खारे !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मग्न जीवन-तट हुए हैं,
पूर्ण भर-भर घट हुए हैं,
किन्तु इनमें स्वाद कैसा
जो अमृत के हैं दुलारे !
आज अपने अश्रु खारे !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[५६]

हम, उर-अन्तर के छाले।

एक आह में फूट पड़ेंगे,
मन की लेकर व्यथा जड़ेंगे
स्मृति-पट पर सहज-सरल-गति,
लाड़-प्यार से पाले।
हम, उर-अन्तर के छाले!

हम आख्यान सुखद जीवन के,
हम समाधि-थल मधुर-मिलन के,
हमने इस कोमल काया में
सरस रंग-रस ढाले;
हम, उर-अन्तर के छाले।

करते नित हम मधुपान रहे,
जीवन-भर गाते गान रहे,
छिल जाय न कोमल गात कहीं
हम रहते हैं दुख पाले।
हम, उर-अन्तर के छाले।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[६०]

झिलमिलाता सांध्यतारा।

दीप रजनी ने सँजोया
या दिवस दुख-अश्रु रोया ?
रश्मि-पट से पोंछकर मुख
थाम अंचल का किनारा।
झिलमिलाता सांध्यतारा।

कुछ हृदय में बेकली है,
रश्मि परिचय ले चली है,
पर असीम अगाध अंबर
में कहाँ उसको सहारा ?
झिलमिलाता सांध्यतारा।

क्षुद्र भी है, दीन भी है,
विश्व यह निस्सीम भी है,
एक भी तो बूँद इसकी
है नहीं यह अश्रुधारा !
झिलमिलाता सांध्यतारा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[६१]

कुछ मधुर और कुछ खारा रे !

रख रख कर ये मृदु मन्द चरण,
करने चलती हैं किसे वरण ?
मन की कटु-कोमल संस्मृतियाँ,
जीवन की कलकल धारा रे !
कुछ मधुर और कुछ खारा रे !

घुल गये अमित मिश्री के कण,
शूलों-फूलों के रसमय क्षण,
वरदानों से है पुण्य परम
अभिशापों की यह कारा रे,
कुछ मधुर और कुछ खारा रे !

प्रस्तर-कठोर मानव जीवन,
कोमल करुणा के रुग्ण चरण
चिह्नित हैं पग पग पर किसने
यह दुख-सुख-भार उतारा रे !
कुछ मधुर और कुछ खारा रे !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[६२]

दुख से जर्जर, अभाव-रीती,

मानवता भू-लुंठिता आज,
त्यागे संस्कृति के साज-बाज,
नयनों में शील-सुधा न लाज,
अश्रान्त अधम नर्तन में रत,
लेकर विडंबना कटु-तीती।
दुख से जर्जर, अभाव-रीती।

प्राणों का मधुरसपान किये,
जीवन-गंगा में स्नान किये,
गौरव-अतीत परिधान किये,
वे कला-कलश अनुपम निधियाँ,
ध्वंसावशेष होकर जीतीं।
दुख से जर्जर, अभाव-रीती।

पूँजी-साम्राज्य, दैत्य-दानव,
संकुचित दलित विगलित मानव,
आहें आहत प्राणों का रव,
धरती पर नरकलोक रचतीं,
वे हाहाकार-गरल पीतीं।
दुख से जर्जर, अभाव-रीती।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हैं सिसक रहे आँसू के कण,
हैं सुबुक रहे जीवन के क्षण,
वरदान बनें तो भी यह व्रण,
जो निकल पड़े उर-पत्थर से,
सरिता कल्याण-सुधा पीती।
दुख से जर्जर, अभाव-रीती।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[६३]

हम नदी के दूरवर्ती कूल ।
वे मिलन के रम्य क्षण अब क्यों न जायें भूल ?
यह विरह का नीर विषम प्रवाह,
है न इसमें राह और न थाह,
बस हृदय में है घुमड़ती आह !
एक तन-मन-प्राण थे वे आज हैं प्रतिकूल ।
हम नदी के दूरवर्ती कूल ।

फूल चुन चुन कर गुहे थे, हो गये वे शूल !
तीव्र सुधि का दंश, निशि-पल हो रहा दुख-मूल ।
कौन अब हमको मिलाये प्राण !
शेष हैं ना वे सुरीले गान ।
हार-सी है धार बहती एक,
हैं भँवर जिसमें अनेकानेक ।
खोल दो, हाँ खोल दो वह मधुर आलिंगन प्रिये !
तुम उधर, हम इधर डोलें बस शिथिल चुंबन लिये ।
चाँदनी की रजत-साड़ी में दुराना गात,
सह सकेगा अब न भव्य प्रभात,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बेकली की विषम कालीरात,
अश्रु-शर से विद्ध यह बरसात !
वे मिलन के रम्य क्षण अब क्यों न जायें भूल।
हम नदी के दूरवर्ती कूल !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[६४]

प्यार से सूनी जवानी।
शुष्क मरुधर की शिला
जिस पर न बरसा बूँद पानी।

किस क्षुधा से जी रही है ?
किस तृषा को पी रही है ?
धैर्य-संबल दे रही है
किस स्वजन की मंजु बानी।

वायु आती पर न बादल,
आह कढ़ती पर न दृगजल।
चाँदनी बिछती, न आतीं
किन्तु चलकर ओस-रानी।

प्राण मधु ले-दे न पाये।
प्रेम-गंगा में न न्हाये।
कौन जानेगा अतृप्ता के
हृदय की दुख-कहानी ?
प्यार से सूनी जवानी।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[६५]

भूल जीवन में सका मैं।

अल्प परिचय, अल्प भाषण
अल्प प्राणों का प्रकाशन
उधर जीवन-युद्ध में दिन-
रात का हारा-थका मैं।
भूल जीवन में सका मैं।

हुए दो ही तो महीने।
सुध न लाकर दी किसी ने।
विस्मृता का आज दु:संवाद
सुन रो-रो पका मैं।
भूल जीवन में सका मैं।

भूल पर अब क्या सकूँगा ?
याद जीवन भर रखूँगा।
आज खोकर जिस सखी को
सजल लोचन कर सका मैं।
भूल जीवन में सका मैं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

[६६]

प्यार है बंधन तुम्हारा।

मत मुझे बाँधो सुनयने!
क्यों चुभाओ नैन पैने?
मैं सहज अलमस्त हूँ
भगवान का मुझको सहारा।
प्यार है बंधन तुम्हारा।

स्वर्ण के ये घट हटा लो।
रंक पर मत मधु उछालो।
एक रोटी की क्षुधा के
मोल जिसको विश्व सारा।
प्यार है बंधन तुम्हारा।

मोह में पड़ क्यों ठगाओ?
सार्थ यौवन कर न जाओ।
जौहरी है, हाट है, है
रूप का जब रत्न न्यारा।
प्यार है बंधन तुम्हारा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

औषधि की बूँद

अतुल आलोक-पुंज दीप्त आज कण-कण,
अंबर खचित-उड़ु आया अवनी पर, यों
ज्योतित निशा हुई,
जगमग गृह-पुर,
वीथी, सब राजपथ,
राशिराशि बाल-वृद्ध हास और मोद युत
जा रहे गुंजाते पार्श्व
शीघ्र वायु-वेग से।

नाचता हृदय है,
ताल दे रहा है श्वासजाल,
कौन-सा महोत्सव मनाने को समग्र विश्व
मंत्र मुग्ध, भावलीन,
आत्मविस्मृति मग्न,
एक तान,
एक प्राण,
शून्य भान,
अविश्रान्त, राजप्रासाद ओर
उन्मुख हुआ है कहो ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सुनते नहीं हो शहनाई,
बीन-वेणु-रव,
सुनते नहीं हो गीत गा रहीं पुरांगना ?
देखते नहीं हो अहो,
मंगल कलश,
शुभ्र तोरण हैं द्वार-द्वार ?
कुंकुम छिड़क रही,
दूर्वादल हैं बिछे,
राजपथ रुद्ध हो रहे हैं अति भीड़ से।

कोलाहल मध्य इस लोक-पारावार में
उमड़ रही है एक भावना
उपासना
है मूलमंत्र जिसका
'विश्वभाव'
अन्यथा
राजसुता के इस विवाह-समारोह में
दीन-हीन,
अस्थिलीन,
व्याकुल, बुभुक्षित,
निरंतर निपीड़ित
कंकाल शेष
मंद वेश

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नारी-नर एक पैर जिनका
चितारूढ़ हो रहा—कैसे
हाँ-हाँ, कैसे समुल्लासमग्न
नाचते थिरकते ?
राका में बदल गई आज कुहू रजनी,
खँडहर खिल उठे,
विजन महक उठे,
रोम-रोम रच गया उत्सव के रँग में !
कहते हैं इच्छादान
हेम-हीर-मणियों का
हो रहा निरंतर है
हय-गज-रथ-पट-भूषण-वसन
मुक्त हस्त हो लुटाते
तृप्त याचक-समूह, नहीं चाह शेष जिनमें;
किन्तु आशा-भग्न
शिखा बुझती-सा दीपक की
बूँद-बूँद शोषित हुआ है रक्त जिसका,
शेष नहीं वीर्य-बल
उच्छल
उमंग नहीं यौवन की
खेल रही थी जो कल सौरभ-सी फूल की ।

शय्यासीन अस्थिचर्म,
तार-तार आशा-वर्म,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मौन, निष्कंप, नत आनन,
अधर नील,
आकृति विवर्ण, रद कांतिहीन हड्डियों-से
श्वास-रुद्ध लोटता था युवक शरीर एक
औषधि की बूँद को तरसता।

लौट वृद्ध पिता आये,
अवरुद्ध राजपथ,
लौट आये बंधुवर्ग,
लौटे प्रतिवेशी सब,
पा सकी न अनुजा प्रवेश उस भीड़ में,
राजकर्मचारी जहाँ दंड धरे घूमते,
अस्त्र-शस्त्रधारी बड़े
सैनिक, पदाति, चर, दर्पित सवार
टप-टप-टप अश्व सुम।
देते नहीं बढ़ने किसी को पग एक वे
उस ओर पथ के,
विनय से और युक्ति से,
पशुबल से भी कभी
ठेलकर रोकते।
किसको शरीर और प्राणों से
मोह नहीं अपने?
ऐसा कौन जाकर कहे कि हटो,
जायेंगे, न मानेंगे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कार्य गुरुतर है बुलाता हमें
उस ओर
राज-सुता को चिर सुहाग की शुभाशीष
देता हुआ जाय चला ?

बैठ सब रहे हार मानकर घर में,
साहस बटोर कर व्यथिता, प्रकंपिता,
शून्य-दृष्टि माँ ने तब
हाथ फेर वक्ष पर बालक के यों कहा—
लाल मेरे, लाड़ले, दुलारे,
फूल किंशुक के,
आतप-किरण बिना शीतकाल-रजनी में
तुझे मुरझाने नहीं दूँगी प्राण रहते।

जाती हूँ मैं पल में
लाँघकर राजपथ,
और अभी लाती हूँ
मुक्त कर जड़ित कपाट कविराज के,
वही सुधा,
प्राणमयी औषधि वही कि जिसे पीने से
लौट आते प्राण,
लौट श्वास आती,
रक्त-स्रोत वेग से उमड़ता,
प्राप्त करता है हृदय स्पंदन क्षणेक में।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रोकते ही रोकते
वृद्धा गई तीर-सी निकल राजमार्ग पर,
लंकिनी-सी ठेलकर जाने लगी,
आकर पदाति ने
रोक लिया—कहा कि
"कहाँ जायेगी ?"
"एक बूँद, एक बूँद औषधि,
पड़ा है मृत्यु-सेज पर,
मेरा इकलौता,
मेरा रक्त-मांस,
कोमल कुसुम-बाल ।"

"ओह ! किन्तु कर्तव्यलग्न खड़े हम,
आज्ञा से बँधे हुए,
दया-दाक्षिण्य नहीं,
अश्रु नहीं,
हास नहीं,
कोमल सुवास नहीं,
प्रस्तर-कठोर कर्म, आह ! पर ठहरो,
रोको पग आगे को उठाया हुआ अपना ।
मोती, माणिक्य कहो,
रत्न कहो,
धन कहो,

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

माँग लो सुवर्ण राशि,
व्यंजन विविध-विध,
अशन-वसन वर,
इच्छित विभव माँगो,—किन्तु नहीं आगे पग।"

"क्या कहा ? रत्न-धन-वैभव की भीख
छिः, हटो-हटो मूर्ख नहीं जानते
एक मुसकान पर वार कर फेंक देती
राजकोश जिसके,
दुखित हृदय का वही टूक मम
मूर्छित-विसुध पड़ा
कंठगत प्राण लिए।
निष्ठुर, हटो तो सही
धूल में मिला दो यह रत्नराशि अपनी।
मानव नहीं हो तुम,
दानव, नृशंस अरे !
अंतिम क्षणों के श्वास
मेरे रिक्त कोश के
तुम हो खरीदते
हेम-हीरकों के मूल्य, मन्द !
शोक,—हंत-हा !"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"जननी, ओ मोहमयी !
देखती नहीं हो तुम
सूची का प्रवेश कहाँ ?
मंगल के क्षण में,
अमंगल-सी देख तुम्हें
देगा कौन जाने भला !
और फिर, कविराज भी तो नहीं
तुमको मिलेंगे आज।
भोली, जाओ-जाओ लौट—
भर लो यहाँ से मनमानी रत्नराशि, सुनो
जिससे अनेक शिशु पा सकोगी
इच्छामात्र से कभी।"

"वैभव के कीट ! तुम मातृ-स्नेह जानो क्या ?
चूसकर छोड़ दिया शासन ने राग-रस मन का,
हृदय-विहीन,
अनुभूतिशून्य मानस तुम्हारा, आह !
रोष नहीं करती इसीसे क्षुद्र बुद्धि पर
दयापात्र हो तुम,
गुलाम शक्तिबल के।
मैं हूँ माँ,
मैं हूँ उस बालक की जननी—
निहारता जो शून्य दृष्टि,
द्वार ओर मेरे लिए एकटक।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

एक बूँद, एक बूँद औषधि
उसीके लिए लाने को—
व्यग्र हो रहा है मन,
चंचल हैं प्राण,
तीव्र वेग है पगों का।
कौन रोकता मुझे है, देखूँ—
जा रही हूँ मैं यहाँ—।"

हलचल-कोलाहल,
छिन्नभिन्न, मारपीट,
आह-ऊह, किन्तु कहाँ वृद्धा वह—
—वह व्यूह-भेदिनी ?
शंपा सी दमक कर,
लीन जन-सागर में
हुई है कहाँ वह—
स्नेह-उन्मादिनी ?
एक बूँद औषधि, हाँ एक बूँद के लिए
तड़प-तड़प हाय, व्याकुल है रुग्ण बाल !
लुट रही संपति असंख्य, पर—
एक बूँद औषधि गरीब के लिए नहीं !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

महायुद्ध

युद्ध, महायुद्ध !
ओह, कैसा घोर कृत्य है यह
मानव के कर से ही मानव का नाश !
सिर छिन्न, धड़ छिन्न,
छिन्न कर-पद-मुख-बाहु,
रक्तपात, भीषण अनलदाह,
विस्फोट,
गर्जन, उपलवृष्टि,
झंझा, प्रलयंकर विनाश, महानाश—अरे !
भूमिसात् पुर-घर,
ध्वस्त सभ्यता-शिखर,
संस्कृति-कला-कलश,
नीर नहीं बहतीं पयस्विनी
पिशाचिनी-सी रक्त उफनातीं
उर्म्मियों से कर गीत-गान,
भैरवी, भयावनी, लयंकरी, अशोभना !

करुणा कहाँ है आज ?
लज्जित विपन्न प्रेम,
स्निग्ध मन कुलिश-कठोर कटु तीक्ष्ण धार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

घूर्णित अपार
धुंआ धुंध-पारावार
जन, जनपद, ग्राम-गृह रक्षित न हर्म्य
चीत्कार, हाहाकार सब ओर,
उच्च अट्ट, कोट तुंग-स्तंभ
धूलिसात्,
निर्जन, निशब्द, नत गौरव, गिरे-पड़े।

ज्ञानपीठ, व्यासपीठ,
आश्रम, तपोवन औ' विद्या के निकेतन
महान ग्रंथागार कहाँ ?
कहाँ आज मंदिर ?
कहाँ वे देवमूर्तियाँ
पत्थर में प्राण फूँक गढ़ी शिल्पियों ने जो ?
कहाँ गंध-धूम ? कहाँ कीर्तन मृदंग-ध्वनि ?
वज्र-घोर घर्घर सिरों पर जहाँ टूटते,
फूटते बमक बम,
अग्निशिखा फेंकते,
प्रलंब बाहु में लपेट लेते
किसे छोड़ते !
तांडव निरत रुद्र, वसुधा कराहती,
स्तब्ध होते भानु,
लख ज्वलित कृशानु-जाल,
जल थल नभ अंगार हैं उगलते !

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

खँडहर बिछ रहे,
नगर उजड़ रहे,
खेत शस्य शून्य पड़े,
दीनता विचरती, न भोजन न अन्न
पथ-भ्रष्ट विश्व-सभ्यता,
मानव सिसकता,
मनुष्यता विनाश-ध्वजा उच्च किये घूमती।
राष्ट्र मिटते हैं,
देश-काल के महार्णव में
नित्य ध्वंसलीला नव पौरुष पराक्रम से
रचती विभीषिका नई नई !
उठते बवंडर हैं,
धू-धू चिता जलती,
भस्म होते शत्रु-मित्र,
जन्य जनक,
मात-सुता,
भेद नहीं रंच जहाँ नारी-नर-शिशु का।
कौन बौद्ध, हिन्दू कौन ?
कौन पारसीक, बाह्लीक कौन ?
इस्लाम, क्रिस्तान कौन ?
कौन शूद्र, द्विज कौन ?
रंक, धनकुबेर कौन ?
एक ही पराभव से भाग्यसूत्र सबका
बद्ध.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

श्वास-रुद्ध सब जा रहे
अलक्ष्य, निरुद्देश्य वेश-भूषा हीन
दीन, च्युत-संस्कृति नगर-घर-देश त्याग ।

श्वापद बना है क्रुद्ध मानव,
प्रबुद्ध प्रलय
धर्म-कर्म, रीति-नीति मान्य नहीं उसको ।
हिंसारत बौद्ध आज
दुर्मद न करते विवेक पाप-पथ का ।
चूड़ा पर पगोड़ों के बरस रही है आग
उन्हीं भक्त हाथों से,
तथागत के नाम पर
भक्ति-नत होता जहाँ शीश जन-जन का ।
यही क्या—यही है क्या
सुफल अहिंसा का ?
अमृत की बूँदें आह, सूख गईं कंठ में ही
व्यर्थ बलिदान हुआ ईसा का महान वह
ईसवी सहस्र दो तक याद नहीं रख सका—
पामर कृतघ्न नर
वाणी वह
जिसमें भरी थी कल्याण-सुधा जग की ।
सूख नहीं पाया अभी रक्त भी सलीब का
ढोंग उस भक्ति का
अधिक चलेगा नहीं ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

धराशायी चर्च होते ईसानुयायियों से,
कण-कण वसुधा का सिहर उठा है देख
यह अतिचार मंद मानव-समाज का !

सागर का हृदय विलोड़ित-स्तब्ध नभ,
क्षुब्ध मेघ, पवन विकंपित,
विजृम्भित कठोर गिरिमाला,
तृणराजि है सिहरती ।
मज्जित घृणा से पशु,
नत-शीश ग्लानि से
" 'यही है तेरा विश्वप्रेम'—कहते—
रे मानव ! प्रवंचना के पुतले !
लाज भी नहीं है तुझे करते सदर्प यह विघोषणा
कि 'रक्षक हमीं' हैं सभ्यता के और संस्कृति के,
वाहक स्वतंत्रता के,
नियन्ता समाज के औ राष्ट्र के विधायक
सुनीतिवान, ज्ञानवान,
भूतिमान, प्रीतिवान मर्त्य में है कौन और ?
हम हैं प्रतीक उसी विश्वरूप सृष्टा के ।'
थोथी बात, थोथा दर्प,
मानव ! तुम्हारा यह,
रक्त से रँगे हैं हाथ जिसके स्वजाति के ।
छिः छिः, दूर करो विष वंचना का यह,
न चाहिए तुम्हारा पाखंड हमें ।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

आह, हतभाग्य नर !
नारकी विभीषिका में मग्न आकंठ आज
नभ से निधन औ दिगन्त से तिरस्कार
घृणा वसुधा से जिसे प्राप्त वरदान में।
जल रहा भीतर से,
बाहर से आहत,
संतप्त, अभिशप्त रत निष्ठुर विनाश में।

प्रश्न भी है उत्तर भी खंडप्रलय आज का
वज्रघोष में भी एक आशा की किरण शुभ्र
झाँकती नहीं है क्या ?
क्या घनतम रात्रि के कठोर अवगुंठन में
दीप्त नहीं होते दामिनी से दिवा के अंग ?
भरता प्रकाश नहीं जड़ जागृति में क्या ?
क्या दैन्य और दर्प आज
सोने नहीं जा रहे हैं साथ-साथ
एक मन्वन्तर को ?
सतयुग हेम-मुकुट ओढ़ कर मन्द चरण
आ रहा नहीं है क्या
करों में वरदान लिये
शाश्वत स्वतंत्रता का,
समता, सुबंधुता का ?

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE